इंद्रावती प्रगट भई पिउ पास, एक भई करे प्रकास।
अखंड धाम धनी उजास, जाग जागनी खेलें रास।। २६ ।।

श्री इन्द्रावतीजी पिया के निकट होकर जाहिर हुईं और उनसे एक रस होकर इन वचनों का प्रकाश कर रही हैं। धाम धनी के अखण्ड ज्ञान से जागृत होकर जागनी रास खेल रही हैं।

।। प्रकरण ।। २१ ।। चौपाई ।। ५३३ ।।

आंखां खोल तूं आप अपनी, निरख धनी श्रीधाम।
ले खुसवास याद कर, बांध गोली प्रेम काम।। १ ।।

हे मेरी आत्मा ! तू अपनी आंखें खोलकर धाम के धनी को देख। उनकी लीलाओं को याद कर, प्रेम के बंध बांध।

प्रेम प्याला भर भर पीऊं, त्रैलोकी छाक छकाऊं।
चौदे भवन में करूं उजाला, फोड़ ब्रह्मांड पिउ पास जाऊं।। २ ।।

मैं धनी के प्रेम के प्याले भर भर कर पिऊं तथा चौदह लोकों को धनी की मस्ती में छका दूं। इस तरह चौदह लोकों में ज्ञान का प्रकाश करके क्षर ब्रह्माण्ड को फोड़कर बेहद से परे पिया के पास जाऊं।

वाचा मुख बोले तूं वानी, कीजो हांस विलास।
श्रवना तूं संभार आपनी, सुन धनी को प्रकास।। ३ ।।

हे मेरी जबान ! तुम पिया की वाणी बोलो। हांस और विनोद करो। हे कानो ! तुम सावचेत (सावधान) होकर धनी के वचनों को सुनना।

कहे विचार जीव के अंग, तुम धनी देखाया जेह।
जो कदी ब्रह्मांड प्रले होवे, तो भी ना छोड़ूं पिउ नेह।। ४ ।।

जीव के सभी अंग विचार कर कहते हैं कि तुमने हमें धनी के दर्शन कराए हैं। इसलिए अब ब्रह्माण्ड का प्रलय भी हो जाए तो भी प्रीतम का प्रेम नहीं छोड़ेंगे।

खोल आंखां तूं हो सावचेत, पेहेचान पिउ चित ल्याए।
ले गुन तूं हो सनमुख, देख परदा उड़ाए।। ५ ।।

हे मेरी आंखो ! तुम सावचेत (सावधान) होकर पिया की पहचान करो और उन्हें चित्त में बिठाओ। धनी के गुणों को लेकर अन्दर का परदा उड़ाकर धनी के सामने हो जाओ।

एते दिन वृथा गमाए, किया अधम का काम।
करम चंडालन हुई मैं ऐसी, ना पेहेचाने धनी श्रीधाम।। ६ ।।

ओछे काम करके मैंने इतने दिन फिजूल (बेकार) में गंवाए। मैं इतनी कर्महीन हो गई कि धाम के धनी को नहीं पहचाना।

भट परो मेरे जीव अभागी, भट परो चतुराई।
भट परो मेरे गुन प्रकृती, जिन बूझी ना मूल सगाई।। ७ ।।

हे मेरे अभागे जीव ! तुझे आग लग जाए। चतुराई को तथा मेरे प्राकृतिक गुणों को आग लग जाए। इन्होंने मूल सम्बन्ध (धाम धनी) को नहीं पहचाना।

आग पड़ो तिन तेज बल को, आग पड़ो रूप रंग।
धिक धिक पड़ो तिन ग्यान को, जिन पाया नहीं प्रसंग।।८।।

मेरी शक्ति को, बल को, रूप को, रंग को आग लगे। मेरे ज्ञान को धिक्कार है। इन्होंने ऐसे सुन्दर अवसर को पहचाना नहीं।

धिक धिक पड़ो मेरी पांचो इंद्री, धिक धिक पड़ो मेरी देह।
श्री स्याम सुन्दरवर छोड़ के, संसार सों कियो सनेह।।९।।

मेरी पांचों इन्द्रियों को और तन को धिक्कार है कि धाम धनी को छोड़कर इन्होंने संसार से प्यार किया।

धिक धिक पड़ो मेरे सब अंगों, जो न आए धनी के काम।
बिना पेहेचाने डारे उलटे, ना पाए धनी श्री धाम।।१०।।

मेरे सब अंगों को धिक्कार है जो धनी के काम नहीं आए। इन्होंने धनी की पहचान न करके उलटे माया में डाला। जिससे मुझे धाम धनी नहीं मिल सके।

तुम तुमारे गुन ना छोड़े, मैं बोहोत करी दुष्टाई।
मैं तो करम किए अति नीचे, पर तुम राखी मूल सगाई।।११।।

हे धनी ! तुमने तो कृपा करनी नहीं छोड़ी। मैंने तो बहुत दुष्टता की है। मैंने तो कर्म भी नीच किए। फिर भी आप मूल सम्बन्ध को जानकर कृपा करते रहे।

।। प्रकरण ।। २२ ।। चौपाई ।। ५४४ ।।

वारने जाऊं बनराए वल्लभ की, जाकी सुख सीतल छाया।
देखो ए बन गुन भव औखदी, देखे दूर जाए माया।।१।।

मैं उस वृक्ष पर बलिहारी जाती हूं, जिसकी सुखदायी सीतल छाया में हमारे धनी (गांगजी भाई के घर) बैठते थे। साथजी, देखिए इसके नीचे प्राणनाथजी बैठकर भवसागर से पार उतरने की औषदी तारतम वाणी देते थे। जिस वाणी को देखने से (ग्रहण करने से) माया से छुटकारा मिलता है।

जाऊं वारने आंगने बेलूं, जित ले बैठो संझा समे साथ।
बातें होत चलने धाम की, घर पैंड़ा देखाया प्राणनाथ।।२।।

गांगजी भाई के आंगन की रेती पर बलिहारी जाती हूं जहां सायंकाल सुन्दरसाथ के साथ हमारे धनी बैठते थे और परमधाम चलने की बातें सुनाते थे तथा घर का रास्ता हमारे प्राणनाथ (धनी देवचन्द्रजी) बतलाते थे।

भी बल जाऊं आंगने, आगे पीछे सब साज।
जहां बैठो उठो पांउ धरो, धनी मेरे श्री राज।।३।।

आंगन के सब सामान पर भी बलिहारी जाती हूं जहां मेरे धनी श्री राजजी महाराज बैठते, उठते, पांव रखते थे।

बलिहारी जाऊं बोहोत बेर, देहरी मंदिर द्वार।
वारने जाऊं इन जिमी के, जहां बसत मेरे आधार।।४।।

मैं बार-बार घर की देहरी, दरवाजे पर बलिहारी जाती हूं और उस जमीन पर भी, जहां मेरे प्रीतम रहते थे।